राज कुमार

बनाम

शिक्षा निदेशक और अन्य

(सिविल अपील संख्या 1020/2011)

13 अप्रैल, 2016

[वी. गोपाल गौड़ा और अमितावा रॉय, न्यायाधिपति]

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947:

अध्याय 5-ए, धारा 25 एफ (ए), (बी)-दिल्ली स्कूल शिक्षा अधिनियम, 1973 – उपधारा 2 (एच), 8 (2), 10-छंटनी -चुनौती-एक सार्वजनिक विद्यालय में अपीलार्थी स्थायी चालक, अधिशेष हो गया है, प्रत्यार्थी द्वारा सेवाओं से बर्खास्त किया गया-स्कूल की प्रबंध समिति-धारा 25 एफ (ए) और छंटनी मुआवजे के अनुसार अपीलार्थी को नोटिस जारी करना-न्यायाधिकरण और उच्च न्यायालय ने माना कि अपीलार्थी को प्रबंध समिति द्वारा सेवाओं से हटा दिया गया था प्रक्रिया अपनाते हुए अंतर्गत धारा 25 एफ (ए) और (बी)--अपील पर अभिनिर्धारित किया गयाः एक स्कूल द्वारा नियोजित चालक, एक कुशल व्यक्ति होने के नाते, 1947 अधिनियम के उद्देश्य के लिए एक कर्मचारी है। अपीलार्थी को 07.01.2003 पर छंटनी के लिए सूचना दी गई थी, हालांकि, यह दिखाने के लिए कोई

सबूत नहीं है कि छंटनी की सूचना आज तक उपयुक्त प्राधिकारी को भेजी गई थी। धारा 25 एफ की आवश्यक शर्तों का किसी कर्मचारी की छंटनी के लिए अनुपालन नहीं किया गया था-छंटनी की सूचना और छंटनी के आदेश को रद्द किया गया था -इसके अलावा, प्रबंध समिति ने शिक्षा निदेशक से अपीलकर्ता के खिलाफ पारित बर्खास्तगी के आदेश की पूर्व मंजूरी नहीं ली, जैसा कि डीएसई अधिनियम धारा 8(2) के तहत आवश्यक है -यह दिखाने के लिए कोई सबूत नहीं है कि अपीलकर्ता की छंटनी आवश्यक थी क्योंकि वह 'अधिशेष' हो गया था -इस प्रकार, अनिवार्य प्रावधानों धारा 25 एफ और डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) का अनुपालन न करने के लिए अपीलकर्ता की समाप्ति कानून में खराब है -प्रबंधन द्वारा अपीलकर्ता को बकाया वेतन के साथ उसके पद पर पुनः बहाल करने के लिए -औद्योगिक विवाद (केंद्रीय) नियम, 1957 आर. 76(ए).

धारा 25 एफ (ए), (बी), (सी) -धारा के तहत निर्धारित कार्य की छंटनी के लिए निर्धारित शर्त अन्तर्गत धारा 25 एफ (ए), (बी), (सी) -निर्देशिका या अनिवार्य -माना गया: धारा 25 एफ(सी) एक बाद की शर्त है, लेकिन अभी भी एक अनिवार्य शर्त है जिसे नियोक्ताओं द्वारा कर्मचारियों की छंटनी का आदेश पारित करने से पहले पूरा किया जाना आवश्यकहै।

दिल्ली स्कूल शिक्षा अधिनियम, 1973 धारा 8(2) -आवश्यकता का अनुपालन -एक पब्लिक स्कूल में अपीलकर्ता-स्थायी ड्राइवर, अधिशेष हो

जाने पर, प्रतिवादी-स्कूल की प्रबंध समिति द्वारा सेवाओं से हटा दिया गया -प्रस्तुत किया कि अपीलकर्ता की सेवाओं को समाप्त करने से पहले प्रबंध समिति ने अनिवार्य प्रावधान धारा 8(2) का पालन नहीं किया, इस पर कायम रहते हुए कि कथूरिया मामले में धारा 8(2) को रद्द कर दिया गया था -माना गया: धारा 8(2) एक कर्मचारी के पक्ष में एक प्रक्रियात्मक सुरक्षा है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि शिक्षा निदेशक की पूर्व मंजूरी के बिना समाप्ति या बर्खास्तगी का आदेश पारित नहीं किया जाता है मनमाने ढंग से या अनुचित समाप्ति से बचने के लिए -उच्च न्यायालय ने धारा 8(2 को रद्द करके गलती की कथूरिया पब्लिक स्कूल के मामले में और कानून की दृष्टि से ये खराब है -इसके अलावा, अपीलकर्ता को 07.01.2003 को छंटनी का नोटिस दिया गया था और 25.07.2003 को सेवा से हटा दिया गया था -कथूरिया पब्लिक स्कूल के मामले में निर्णय धारा 8(2) को रद्द करते हुए दो साल बाद प्रस्तुत किया गया था और उत्तरदाताओं को इसका अनुमान नहीं था 8(2) को बाद में रद्द कर दिया जाएगा और इस प्रकार, इसका अनुपालन नहीं करने का निर्णय लिया जाएगा -धारा 8(2) अपीलकर्ता की छंटनी की तारीख पर क़ानून का एक वैध प्रावधान था -पक्षों के मुक़दमे पर अधिकार और दायित्व मुकदमा शुरू होने की तिथि पर कानून के अनुसार विचार किया जाना चाहिए -इस प्रकार, समाप्ति आदेश कानून की दृष्टि से गलत था।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय द्वारा

अभिनिर्धारित: अपीलकर्ता की सेवा से छंटनी और समाप्ति आदेश भी कानून की नजर में गलत है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं आदेश को निरस्त किया जाता है। [अनुच्छेद 37] [726-बी-सी]

2. *एचआर आद्यांतया मामले और **बैंगलोर जल आपूर्ति मामले के अवलोकन से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि एक स्कूल द्वारा नियोजित ड्राइवर, एक कुशल व्यक्ति होने के नाते, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के प्रयोजन के लिए एक श्रमिक है। औद्यौगिक विवाद अधिनियम 1947 के प्रावधान तत्काल मामले के तथ्यों पर लागू होता है। [अनुच्छेद 20] [713-सी]

*एच.आर. अद्यानथया बनाम सैंडोज़ (इंडिया) लिमिटेड **(1997) 5 एससीसी 737;** ** बैंगलोर जल आपूर्ति और सीवरेज बोर्ड बनाम ए. राजप्पा और अन्य **1978 (3) एससीआर 207: (1978) 2 एससीसी 213 पर निर्भर किया गया।**

3.1 ट्रिब्यूनल और साथ ही उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए तर्क और को स्वीकार नहीं किया जा सकता। मानते हैं कि आई. डी. अधिनियम की धारा 25 एफ (सी) के तहत नोटिस राज्य सरकार को तामील नहीं किया गया है, जो बॉम्बे पत्रकारों के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर निर्भर करता है, जिसे वर्ष 1963 में प्रस्तुत किया गया था और जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि आई. डी. अधिनियम की धारा 25 एफ.

(सी) के प्रावधान निर्देशिका हैं और प्रकृति में अनिवार्य नहीं हैं। न्यायाधिकरण के साथ-साथ उच्च न्यायालय ने इस बात को नजरअंदाज कर दिया कि बाद में संसद ने औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम 1964 लागू किया। विधायिका की ओर से ऐसा कुछ भी नहीं किया गया जिससे यह संकेत मिले कि उसका इरादा आई. डी. अधिनियम की धारा 25 एफ. (सी) को एक निर्देशिका प्रावधान बनाना है, जबकि उसी धारा की अन्य दो उप-धाराएं प्रकृति में अनिवार्य हैं। यह संशोधन किया गया था जिसका उद्देश्य किसी भी अन्य प्राधिकारी को निर्दिष्ट रूप से नोटिस देना प्रशासनिक रूप से आसान बनाना है। [अनुच्छेद 24,25] [714-सी-ई, जी]

3.2 इस न्यायालय ने ***बॉम्बे पत्रकार मामले में आईडी अधिनियम और उसके तहत संबंधित नियमों को एक साथ पढ़ा और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि धारा 25एफ(सी) छंटनी के लिए एक पूर्ववर्ती शर्त नहीं है। इस फैसले के बारे में किसी भी तरह की कल्पना के विस्तार से यह नहीं कहा जा सकता कि उद्योगों को इस शर्त का पालन करने की बिल्कुल भी आवश्यकता नहीं है। अधिक से अधिक, यह माना जा सकता है कि धारा 25एफ(सी) एक अनुवर्ती शर्त है, लेकिन यह अभी भी एक अनिवार्य शर्त है जिसे कामगार की छंटनी का आदेश पारित होने से पहले नियोक्ताओं द्वारा पूरा किया जाना आवश्यक है। [अनुच्छेद 26] [715-डी-एफ]

*** बॉम्बे यूनियन ऑफ जर्नलिस्ट्स और अन्य बनाम बॉम्बे राज्य का और अन्य **ए.आई.आर. 1964 एस.सी. 1671;** मैकिनन मैकेंजी एंड कंपनी लिमिटेड बनाम मैकिनन कर्मचारी संघ **(2015) 4 एस. सी. सी. 544-संदर्भित।**

3.3 औद्योगिक विवाद (केंद्रीय) नियम, 1957 के नियम 76 (ए) में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि कर्मचारी को नोटिस दिए जाने की तारीख से तीन दिनों के भीतर नोटिस को उपयुक्त अधिकारियों को भेजा जाना चाहिए। वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता को 07.01.2003 को छंटनी का नोटिस दिया गया था। उत्तरदाताओं की ओर से आज तक कोई सबूत पेश नहीं किया गया है जिससे पता चले कि छंटनी का नोटिस उचित प्राधिकारी को भेजा गया है। यह स्पष्ट है कि किसी श्रमिक की छंटनी के लिए धारा 25 एफ की अनिवार्य शर्तों का पालन नहीं किया गया है। छँटनी की सूचना और छँटनी का आदेश को रद्द किया गया। [अनुच्छेद 26, 27] [716-डी-एफ]

4.1 प्रतिवादी-स्कूल ने प्रस्तुत किया कि प्रतिवादी-प्रबंध समिति की ओर से डी.एस.ई. अधिनियम की धारा 8 (2) का पालन करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। ** कथूरिया पब्लिक स्कूल मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय के फैसले पर निर्भर किया गया, जिसमें डीएसई की धारा 8(2) को रद्द कर दिया गया था। यह नहीं कहा जा सकता कि अपीलकर्ता की**

सेवाओं की समाप्ति के लिए पूर्वानुमति प्राप्त नहीं करना उचित है। धारा 8(2) एक कर्मचारी के पक्ष में एक प्रक्रियात्मक सुरक्षा है जो यह सुनिश्चित करती है कि शिक्षा निदेशक की पूर्व मंजूरी के बिना समाप्ति या बर्खास्तगी का आदेश पारित नहीं किया जाता है। यह किसी मान्यता प्राप्त निजी स्कूल के कर्मचारी की मनमानी या अनुचित समाप्ति या बर्खास्तगी से बचने के लिए है। डीएसई अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के कथन को पढ़ने से स्पष्ट रूप से पता चलेगा कि इसे लागू करते समय विधायिका का इरादा स्कूल के कर्मचारियों को कार्यकाल की सुरक्षा प्रदान करना और उनके रोजगार के नियमों और शर्तों को विनियमित करना था। [अनुच्छेद 30, 31, 32, 33] [717-जी-एच; 718-ए; 719-एफ-एच; 720-ए; 722-ई]

प्रिंसिपल एवं अन्य बनाम पीठासीन अधिकारी एवं अन्य 1978 (2) एससीआर 507: (1978) 1 एससीसी 498 -संदर्भित।

4.2 दिल्ली उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने कथूरिया पब्लिक स्कूल के मामले में टीएमए पाई के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर निर्भर करके डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) को रद्द करने में गलती की। इसमें विवाद किसी स्कूल के कर्मचारियों के कार्यकाल की सुरक्षा का नहीं था, बल्कि सवाल शैक्षणिक संस्थानों के निर्बाध रूप से कार्य करने के अधिकार का था। डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) एक ऐसी एहतियाती सुरक्षा है जिसका पालन यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाना चाहिए कि

शैक्षणिक संस्थानों के कर्मचारियों को प्रबंधन के हाथों अनुचित व्यवहार का सामना न करना पड़े। उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने कथूरिया पब्लिक स्कूल के मामले में डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) को रद्द करते हुए कटरा एजुकेशनल सोसाइटी के मामले में निर्धारित कानून को सही ढंग से लागू नहीं किया है, जिसमें इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने, डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) के समान प्रावधान के संदर्भ में और सहायता प्राप्त या गैर सहायता प्राप्त मान्यता प्राप्त स्कूल के विनियमन के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, यह माना गया है कि निजी मान्यता प्राप्त विद्यालयों के कर्मचारियों की सेवा शर्तों के विनियमन को शैक्षणिक प्राधिकरणों द्वारा नियंत्रित किया जाना आवश्यक है और राज्य विधानमंडल को कानून बनाने का अधिकार है ऐसा डी. एस. ई. अधिनियम में प्रावधान है। खण्ड पीठ ने गलत निर्भर किया कटरा एजुकेशन सोसाइटी के मामले में फैसले के उस हिस्से पर, जो संविधान के अनुच्छेद 14 और सहायता प्राप्त और गैर-सहायता प्राप्त शैक्षणिक संस्थानों से सम्बंधित था, जिसका वहां की तथ्यात्मक स्थिति पर कोई प्रभाव नहीं था। इसलिए, कथूरिया पब्लिक स्कूल के मामले में डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) को रद्द करने का निर्णय कानून की दृष्टि से गलत है। [अनुच्छेद 33] [722-एच; 723-ए-एच]

कथूरिया पब्लिक स्कूल बनाम शिक्षा निदेशक एवं अन्य **113(2004) डीएलटी 703 (डीबी) -अस्वीकृत।**

टीएमए पीएआई फाउंडेशन बनाम कर्नाटक राज्य **2002 (3) तितम्बा एससीआर 587:(2002) 8 एससीसी 481;** कटरा एजुकेशनल सोसायटी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य **एआईआर 1966 एससी 1307: 1966 एससीआर 328;** फ्रैंक एंथोनी पब्लिक स्कूल कर्मचारी संघ बनाम भारत संघ और अन्य **1987 (1) एससीआर 238: (1986) 4 एससीसी 707 – संदर्भित।**

4.4 अपीलकर्ता को छंटनी का नोटिस 07.01.2003 को दिया गया था और उसे 25.07.2003 को सेवा से हटा दिया गया था। कथूरिया स्कूल के मामले में डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) को रद्द करने का निर्णय लगभग ठीक दो साल बाद दिया गया। निश्चित रूप से, उत्तरदाताओं ने यह अनुमान नहीं लगाया होगा कि अपीलकर्ता के खिलाफ पारित बर्खास्तगी के आदेश के लिए निदेशक से पूर्व अनुमोदन की आवश्यकता को बाद में रद्द कर दिया जाएगा और इसलिए उन्होंने इसका अनुपालन नहीं करने का फैसला किया। धारा 8(2) अपीलकर्ता की छंटनी की तारीख के अनुसार क़ानून का एक वैध प्रावधान था, और इसका कोई कारण नहीं है कि इसका अनुपालन नहीं किया जाना चाहिए था। मुकदमे के पक्षकारों के अधिकारों और दायित्वों पर मुकदमा शुरू होने की तारीख पर कानून के अनुसार विचार किया जाना चाहिए। [अनुच्छेद 34] [724-ए-डी]

दयावती बनाम इंद्रजीत **एआईआर 1966 एससी 1423:1966 एससीआर 275;**

कैरोना लि. बनाम पार्वती स्वामीनाथन एंड संस **2007 (1) एससीआर 656: (2007) 8 एस. सी. सी. 559-संदर्भित।**

4.5 प्रतिवादी-प्रबंध समिति ने अपीलकर्ता के खिलाफ पारित समाप्ति के आदेश की डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) के तहत आवश्यक पूर्व मंजूरी शिक्षा निदेशक, सरकार एनसीटी, दिल्ली से नहीं ली। [अनुच्छेद 35] [724-जी-एच]

5. आईडी अधिनियम धारा 25 एफ और डी.एस.ई. अधिनियम की धारा 8 (2) के अनिवार्य प्रावधानों का पालन न करने के लिए अपीलार्थी की समाप्ति कानूनी रूप से गलत है। प्रतिवादी स्कूल ने यह दिखाने के लिए रिकॉर्ड पर कोई सबूत पेश नहीं किया कि अपीलार्थी की छंटनी आवश्यक थी क्योंकि वह 'अधिशेष' हो गया था। अपीलार्थी को वर्ष 2003 में बर्खास्त करने का आदेश दिया गया था और वह आज तक बेरोजगार है। प्रतिवादी यह दिखाने के लिए कोई सबूत पेश करने में असमर्थ रहे हैं कि वह उस अवधि के दौरान लाभकारी रूप से कार्यरत था और इस प्रकार, वह मजदूरी और अन्य परिणामी लाभों को वापस करने का हकदार है। [अनुच्छेद 36] [725-ए-सी]

दीपाली गुंडू सुरवासे बनाम क्रांति जूनियर अध्यापक महाविद्यालय (डी. ईडी.) और अन्य **2013 (9) एससीआर 1:(2013) 10 एससीसी. 324-पर निर्भर।**

6. प्रतिवादी-प्रबंध समिति को निर्देशित किया जाता है कि अपीलार्थी को उसके पद पर बहाल करें। नतीजतन, इस आदेश की तारीख तक पिछले वेतन की राहत अपीलार्थी को उसकी सेवाओं की समाप्ति की तारीख से सभी परिणामी लाभों के साथ प्रदान की जाती है। [अनुच्छेद 37] [726-बी-सी]

सुश्री ए. सुंदरम्बल बनाम सरकार गोवा, दमन और दीव और अन्य **1988 (1) तितम्बा एससीआर 604: (1988) 4 एससीसी 42;** बाबू वर्गीज और अन्य बनाम केरल बार काउंसिल और अन्य **1999 (1) एससीआर 1121: (1999) 3 एस. सी. सी. 422-संदर्भित।**

केस लॉज संदर्भ

एआईआर 1964 एससी 1671	**संदर्भित किया गया।**	**अनुच्छेद 13**
1988 (1) तितम्बा एससीआर 604	**संदर्भित किया गया।**	**अनुच्छेद 17**
1978 (3) एससीआर 207	**निर्भर किया।**	**अनुच्छेद 20**
(1997) 5 एससीसी 737	**निर्भर किया।**	**अनुच्छेद 20**

(2015) 4 एससीसी 544	संदर्भित किया गया।	अनुच्छेद 2 6
1999 (1) एससीआर 1121(डीबी)	संदर्भित किया गया।	अनुच्छेद 29
113 (2004) डीएलटी 703 (डीबी)	अस्वीकृत किया	अनुच्छेद 33
2002 (3) तितम्बा एससीआर 587	संदर्भित किया गया।	अनुच्छेद 30
1966 एससीआर 328	संदर्भित किया गया।	अनुच्छेद 32
1978 (2) एससीआर 507	संदर्भित किया गया।	अनुच्छेद 33
1987 (1) एससीआर 238	संदर्भित किया गया।	अनुच्छेद 34
1966 एससीआर 275	संदर्भित किया गया।	अनुच्छेद 34
2007 (10) एससीआर 656	संदर्भित किया गया।	अनुच्छेद 32
एच 2013 (9) एससीआर 1	निर्भर किया।	अनुच्छेद 36

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयः सिविल अपील सं. 1020/2011

रिट याचिका (सी) संख्या 5349/2008 में नई दिल्ली में दिल्ली उच्च न्यायालय के दिनांक 28.07.2008 के निर्णय और आदेश से।

अपीलार्थी की ओर से ए. टी. एम. संपत, राहुल नागपाल।

प्रतिवादी के लिए ए. के. सांघी, डॉ. अभिषेक अत्रे, डी. एस. माहरा, अजय कुमार सिंह, रवींद्र ए. लोखंडे, एस. एस. रे, राखी रे, वैभव गुलिया, अनिल कटियार।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया था

वी. गोपाल गौड़ा, न्यायाधिपति। 1. वर्तमान अपील रिट याचिका (सी) संख्या 5349 /2008 में नई दिल्ली में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 28.07.2008 के विवादित फैसले और आदेश से उत्पन्न होती है, जिसमें उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा दायर उक्त रिट याचिका को आरंभ में खारिज कर दिया और दिनांक 22.08.2008 के दिल्ली स्कूल ट्रिब्यूनल द्वारा अपीलार्थी के खिलाफ पारित (इसके बाद) "न्यायाधिकरण" के रूप में संदर्भित समाप्ति आदेश को बरकरार रखा इस आधार पर कि अपीलार्थी, जो एक चालक था, को प्रतिवादी प्रबंध समिति, डी. ए. वी. पब्लिक स्कूल द्वारा उसकी सेवाओं से हटा दिया गया था औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अध्याय 5-ए की धारा 25 एफ (ए) और (बी) के तहत निर्धारित (इसके बाद "आई. डी. अधिनियम" के रूप में संदर्भित) प्रक्रिया का पालन करते हुए।

2. पक्षकारों की ओर से पेश प्रतिद्वंद्वी कानूनी दलीलों की सराहना करने के लिए मामले के आवश्यक संक्षिप्त तथ्यों को नीचे बताया गया हैः

3. अपीलार्थी डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, पॉकेट 'सी', एल.आई.जी. फ्लैट्स, ईस्ट ऑफ लोनी रोड, दिल्ली द्वारा चालक के रूप में नियुक्त किया गया था और वर्ष 1994 में उक्त पद पर स्थायी हो गया था। उनकी सेवा की शर्तें धारा 2 (एच), 8 (2), 10 और दिल्ली स्कूली शिक्षा अधिनियम, 1973 (इसके बाद "डी. एस. ई. अधिनियम" के रूप में संदर्भित) के अन्य प्रावधानों के तहत आती हैं।

4. 01.05.2001 को, डीएवी कॉलेज प्रबंध समिति ने पब्लिक स्कूल गवर्निंग बॉडी की 72 वीं बैठक में, इस न्यायालय के **एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ** दिनांक 26.03.2001 के निर्देशों के अनुपालन में सीएनजी सुविधा के साथ नई स्कूल बसें खरीदने का एक प्रस्ताव पारित किया और डीएवी स्कूलों के प्रबंधन को उक्त उद्देश्य के लिए राष्ट्रीयकृत बैंकों से ऋण जुटाने की अनुमति दी गई।

5. प्रतिवादी-प्रबंध समिति ने अपनी दिनांकित 24.08.2002 की बैठक में दो सबसे कनिष्ठ अधिशेष चालकों की सेवाओं को कम करने का प्रस्ताव पारित किया अर्थात् अपीलकर्ता और एक अमर नाथ, इस कारण से कि स्कूल के पास दो पुराने यांत्रिक रूप से अनफिट वाहन थे, अर्थात् एक मेटाडोर (पंजीकरण संख्या डी एल-IV-1481) और एक मारुति वैन जिसका पंजीकरण संख्या डी एल-5C-3107 है जिनका निस्तारण क्रमशः 01.09.1995 एवं 13.06.1997 को किया गया। वैकल्पिक व्यवस्था के रूप

में, पिछले प्रस्ताव के निर्देशों के अनुसार छात्रों के परिवहन के लिए निजी बसों को किराए पर लिया जाना था, लेकिन प्रतिवादी-प्रबंध समिति धन की कमी के कारण नई बसें नहीं खरीद सकी, जिसके परिणामस्वरूप नौकरी उपलब्ध न होने के कारण अपीलार्थी को अधिशेष घोषित कर दिया गया।

6. 07.01.2003 को, प्रतिवादी-प्रबंध समिति ने आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ (ए) के अनुसार अपीलकर्ता को एक नोटिस जारी किया, जिसमें कहा गया कि उसकी सेवाओं की अब स्कूल को आवश्यकता नहीं है और एक माह की नोटिस अवधि समाप्त होने पर उसे हटा दिया जाएगा। नोटिस में यह भी कहा गया है कि अपीलकर्ता छंटनी मुआवजे का हकदार है जिसका भुगतान एक महीने की नोटिस अवधि समाप्त होने के बाद किया जाएगा।

7. 10.01.2003 पर, अपीलार्थी ने अपने वकील के माध्यम से उपरोक्त नोटिस का जवाब दिया, जिसमें कहा गया था कि विवादित नोटिस अन्यायपूर्ण और अवैध है क्योंकि अपीलार्थी डी. एस.ई. अधिनियम के प्रावधानों के तहत विद्यालय का एक स्थायी कर्मचारी है। नोटिस में यह भी कहा गया था कि स्कूल पाँचवें वेतन आयोग की सिफारिशों के अनुसार अपीलार्थी को 70,000 / रुपए की बकाया राशि का भुगतान करने में विफल रहा था। उसी तारीख को, अपीलार्थी ने अपने वकील के माध्यम से, अपीलार्थी को पांचवें वेतन आयोग के अनुसार सभी बकाया राशि के

भुगतान के संबंध में प्रतिवादी संख्या 1-शिक्षा निदेशक, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार को एक पत्र लिखा।

8. दिनांकित 22.01.2003 पत्र के माध्यम से, प्रतिवादी-प्रबंध समिति ने अपने वकील के माध्यम से अपीलार्थी को सूचित किया कि स्कूल पाँचवें वेतन आयोग की सिफारिशों के अनुसार अपीलार्थी को वेतन और भत्तों का भुगतान किया जा रहा है जो मूल वेतन के रूप में 3,500/- रुपये प्रति माह और महँगाई भत्ते के रूप में 1,435/-रुपये था। उसी पत्र में, प्रतिवादी-प्रबंध समिति ने भी इस बात से इनकार किया कि अपीलार्थी को देय रुपए 70,000/-की राशि को रोक दिया था।

9. 31.01.2003 पर, अपीलार्थी ने दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका (सी) 957/2003 दायर की, जिसमें प्रार्थना की गई कि उस पर तामील दिनांकित 07.01.2003 नोटिस रद्द कर दिया जाए और विवादित नोटिस के संचालन पर तब तक रोक लगा दी जाए जब तक कि रिट याचिका का अंत में निपटारा नहीं हो जाता।

10. इस बीच, 25.07.2003 दिनांकित पत्र के माध्यम से, प्रतिवादी प्रबंध समिति ने अपीलार्थी को सूचित किया कि चूंकि आई.डी. अधिनियम की धारा 25 एफ के तहत विस्तारित नोटिस अवधि भी समाप्त हो गई थी, इसलिए उसकी सेवाएं अब समाप्त कर दी गई हैं। इसके अलावा, 01.07.2003 से 25.07.2003 तक एक महीने की नोटिस अवधि के लिए

4,165/-रुपये की राशि का वेतन चेक, साथ ही 22.07.2003 दिनांकित नंबर 877690 का एक चेक, 25,650/-रुपये की राशि के लिए। आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ (बी) के तहत छंटनी मुआवजा पत्र के साथ संलग्न किया गया था।

11. उच्च न्यायालय ने दिनांक 25.02.2004 के निर्णय और आदेश द्वारा अपीलकर्ता द्वारा दायर रिट याचिका संख्या 957/2003 को खारिज़ कर दिया। अमर नाथ बनाम शिक्षा निदेशक, सरकार और अन्य के मामले में अन्य बर्खास्त ड्राइवर अमर नाथ द्वारा दायर रिट याचिका (सी) संख्या 970/2003 दिनांक 21.07.2003 में पारित दिल्ली उच्च न्यायालय के फैसले पर निर्भर करते हुए, उच्च न्यायालय ने माना कि डीएसई अधिनियम की धारा 8 बहुत व्यापक है और किसी भी प्रकार की समाप्ति इसके दायरे में आएगी। तदनुसार, याचिकाकर्ता को डीएसई अधिनियम के तहत उचित उपाय खोजने की स्वतंत्रता देते हुए रिट याचिका को खारिज़ कर दिया गया।

12. तदनुसार, अपीलकर्ता ने दिनांक 07.01.2003 के आक्षेपित छंटनी नोटिस के खिलाफ डीएसई अधिनियम की धारा 8(3) के तहत पीठासीन अधिकारी, दिल्ली स्कूल ट्रिब्यूनल के समक्ष अपील संख्या 09 / 2003 दायर की। न्यायाधिकरण ने अपने फैसले और आदेश दिनांक 22.02.2008 के तहत उक्त अपील को इस आधार पर खारिज़ कर दिया

कि प्रतिवादी-प्रबंध समिति को आईडी अधिनियम की धारा 25एफ (ए) और (बी) के तहत निर्धारित सभी शर्तों को पूरा करने के बाद स्कूल के अधिशेष ड्राइवरों की छंटनी का अधिकार था। न्यायाधिकरण ने छंटनी आदेश की वैधता को बरकरार रखते हुए कहा कि अपीलकर्ता आईडी अधिनियम के प्रावधानों के साथ-साथ डीएसई अधिनियम द्वारा शासित है। डीएसई अधिनियम की धारा 2(एच) "कर्मचारी" को एक शिक्षक के रूप में परिभाषित करती है और इसमें किसी मान्यता प्राप्त स्कूल में काम करने वाले हर दूसरे कर्मचारी को "कर्मचारी" के रूप में शामिल किया गया है। न्यायाधिकरण ने निम्नानुसार कहा:

> "2(एच) चूंकि अपीलकर्ता के रोजगार को नियंत्रित करने वाले कानून दिल्ली स्कूल शिक्षा अधिनियम और नियम, 1973 और औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 हैं। चूंकि दिल्ली स्कूल शिक्षा अधिनियम, 1973 में श्रमिकों की छंटनी का कोई प्रावधान नहीं है, इसलिए किसी एक को अधीन होना होगा यह देखने के लिए औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के प्रावधानों पर कि क्या छंटनी के संबंध में उक्त अधिनियम की शर्तों का प्रबंधन द्वारा पूरी तरह से पालन किया गया था या नहीं।"

13. न्यायाधिकरण ने आगे कहा कि आई.डी. अधिनियम की धारा 25 एफ के तहत छंटनी के लिए सभी पूर्ववर्ती शर्तों को पूरा करना आवश्यक है जिनको कि तत्काल मामले में पूरा किया गया है। अपीलार्थी को आईडी अधिनियम दिनांक 07.01.2003 के प्रावधानों के तहत नोटिस दिया गया। प्रकार, उनकी छंटनी की अपेक्षित तिथि 07.02.2003 थी। हालाँकि, अपीलकर्ता को 25.07.2003 को ही हटा दिया गया था। यह माना गया कि चूंकि एक महीने से अधिक का नोटिस दिया गया था, इसलिए आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ (ए) की शर्तों का विधिवत पालन किया गया है। न्यायाधिकरण ने अपने आदेश में आगे कहा कि अपीलकर्ता को निरंतर सेवा के प्रत्येक पूर्ण वर्ष के लिए 15 दिनों के औसत वेतन की गणना करते हुए छंटनी मुआवजे का भुगतान किया गया था। प्रतिवादी-प्रबंध समिति ने 9 साल की अवधि के लिए उनकी सेवा की गणना की और निष्कर्ष निकाला कि अपीलकर्ता साढ़े चार महीने की अवधि के लिए वेतन का हकदार है, जो कि रु। 19,740/-, के साथ मूल वेतन रु. 3,500/-और महंगाई भत्ता रु. 4,071/-को ध्यान में रखते हुए कुल मिलाकर, अपीलकर्ता को मुआवजे के रूप में 25,650/-रुपये का भुगतान किया गया। इसलिए, न्यायाधिकरण ने माना कि आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ (बी) का भी विधिवत अनुपालन किया गया था। उचित सरकार को निर्धारित तरीके से नोटिस दिए जाने के मुद्दे पर, न्यायाधिकरण ने बॉम्बे यूनियन ऑफ जर्नलिस्ट्स और अन्य बनाम बॉम्बे राज्य और अन्य', ए.आई.आर. 1964

एस. सी. 1671 के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा जताया जिसमें यह माना गया कि यह प्रकृति में केवल निर्देशिका थी, और छंटनी के लिए कोई शर्त नहीं थी। इस न्यायालय ने निम्नानुसार व्यवस्था दी थी:

> "(सी) का उद्देश्य श्रमिक के हितों की रक्षा करना नहीं है। इसका उद्देश्य केवल उपयुक्त सरकार को छंटनी के बारे में सूचना देना है, और यह केवल सरकार को इसके क्षेत्र के भीतर विभिन्न उद्योग में रोजगार की शर्तों के बारे में सूचित रखने में मदद करता है। ऐसा कोई बाध्यकारी विचार मौजूद नहीं दिखता है जो खंड (सी) द्वारा निर्धारित प्रावधान को खंड (ए) और (बी) के मामले में पूर्ववर्ती शर्त बनाने का औचित्य साबित करेगा। <u>इसलिए, जिस प्रयोजन को खंड (ए) और (बी) द्वारा प्राप्त करने का इरादा है, वह प्रयोजन खंड (सी) को ध्यान में रखते हुए, उससे अलग है, खंड (ए) और (बी) के विपरीत, यह मानना अनुचित नहीं होगा कि खंड (सी) कोई पूर्व शर्त नहीं है।"</u>

(इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया)

इस प्रकार, न्यायाधिकरण ने अभिनिर्धारित किया कि तत्काल मामले में छंटनी के लिए दोनों अनिवार्य शर्तों को पूरा किया गया है, और आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ (सी) केवल एक निर्देश देती है न कि एक पूर्ववर्ती शर्त। न्यायाधिकरण ने आगे कहाः

> "जहां तक किसी कर्मचारी को हटाने से पहले शिक्षा निदेशालय से अनुमति का सवाल है, तो "टीएमए पाई फाउंडेशन बनाम कर्नाटक राज्य" मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के मद्देनजर और हमारे अपने माननीय उच्च न्यायालय ने "कथूरिया पब्लिक स्कूल बनाम शिक्षा निदेशालय" के मामले में शिक्षा निदेशक से पूर्वानुमति प्राप्त करने संबंधी प्रावधान को रद्द कर दिया है और स्कूल प्रबंधन को इस मामले में अपने कर्मचारियों के साथ पेश आने के लिए खुली छूट दे दी है।

न्यायाधिकरण के समक्ष अपीलार्थी द्वारा दायर अपील तदनुसार खारिज़ कर दी गई।

14. न्यायाधिकरण के उक्त निर्णय से व्यथित होकर, अपीलार्थी ने दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका (सी) संख्या 5349 /2008

दायर की उसी की सत्यता पर सवाल उठाते हुए विभिन्न आधारों पर जोर दिया जाता है। उच्च न्यायालय ने विवादित निर्णय और दिनांक 28.07.2008 के आदेश के माध्यम से इसे सीमित रूप से खारिज़ कर दिया क्योंकि उसे न्यायाधिकरण द्वारा लिए गए दृष्टिकोण में कोई ख़ामी नहीं मिली। इसलिए, वर्तमान अपील।

15. पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील द्वारा प्रस्तुत दलीलों के आधार पर, हमारे विचार के लिए निम्नलिखित मुद्दे उत्पन्न होंगे:-

1 क्या अपीलार्थी आई डी. अधिनियम के उद्देश्य से एक कर्मचारी है?

2 क्या आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ (ए), (बी) और (सी) के तहत निर्धारित किसी कर्मचारी की छंटनी के लिए पूर्ववर्ती शर्तें इस मामले में पूरी की गई हैं?

3 क्या डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) का प्रावधान तत्काल मामले के तथ्यों पर लागू है?

4 कौन सा आदेश?

16. इससे पहले कि हम पक्षों की ओर से पेश की गई प्रतिद्वंद्वी कानूनी दलीलों पर ध्यान दें, हमारे लिए तत्काल मामले में लागू आईडी अधिनियम और डीएसई अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों पर विचार करना महत्वपूर्ण है।

डीएसई अधिनियम वर्ष 1973 में अधिनियमित किया गया था और यह है:

"केंद्र शासित प्रदेश दिल्ली में स्कूली शिक्षा के बेहतर संगठन और विकास तथा उससे जुड़े या उसके आनुषंगिक मामलों का प्रावधान करने के लिए एक अधिनियम" [2016] 1 एस सी आर।

धारा 2 (एच) एक कर्मचारी को परिभाषित करती है:

"इसका अर्थ है एक शिक्षक और इसमें किसी मान्यता प्राप्त विद्यालय में काम करने वाला प्रत्येक अन्य कर्मचारी शामिल है।

डी.एस.ई. अधिनियम की धारा 8 (2) में निम्नलिखित प्रावधान हैं:

> "इस संबंध में बनाए गए किसी भी नियम के अधीन, किसी मान्यता प्राप्त निजी स्कूल के किसी भी कर्मचारी को निदेशक की पूर्व मंजूरी के बिना बर्खास्त नहीं किया जाएगा, हटाया नहीं जाएगा या रैंक में कमी नहीं की जाएगी और न ही उसकी सेवा समाप्त की जाएगी।"

डीएसई अधिनियम की धारा 10 इस प्रकार है:

10. (1). कर्मचारियों का वेतन-वेतनमान और भत्ते, चिकित्सा सुविधाएं, पेंशन, ग्रेच्युटी भविष्य निधि और किसी मान्यता प्राप्त निजी स्कूल के कर्मचारियों के अन्य निर्धारित लाभ संबंधित स्थिति के उपयुक्त प्राधिकरण द्वारा संचालित विद्यालय के स्कूलों के कर्मचारियों से कम नहीं होंगे।

(2). प्रत्येक सहायता प्राप्त स्कूल की प्रबंध समिति, हर महीने, वेतन और भत्ते, चिकित्सा सुविधाओं, पेंशन, ग्रेच्युटी, भविष्य निधि और अन्य निर्धारित लाभों के लिए प्रशासक के पास अपना हिस्सा जमा करेगी और प्रशासक प्रत्येक माह के पहले सप्ताह के भीतर सहायता प्राप्त विद्यालयों के कर्मचारियों को वेतन एवं भत्ते वितरित करेगा, या वितरित कराएगा।

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 है:

> "औद्योगिक विवादों की जांच और निपटान और कुछ अन्य उद्देश्यों के लिए प्रावधान करने के लिए एक अधिनियम"

धारा 2(एस) एक कर्मकार को इस प्रकार परिभाषित करती है:

"**2 (एस).** "कर्मचारी" का अर्थ है किसी भी उद्योग में किसी भी व्यक्ति (प्रशिक्षु सहित) को किसी भी मैनुअल, अकुशल, कुशल, तकनीकी, परिचालन, लिपिकीय या पर्यवेक्षी कार्य को किराए या इनाम के लिए नियोजित करना, चाहे रोजगार की शर्तें स्पष्ट हों या निहित, और किसी औद्योगिक विवाद के संबंध में इस अधिनियम के तहत किसी भी कार्यवाही के प्रयोजनों के लिए, इसमें कोई भी ऐसा व्यक्ति शामिल है जिसे उस विवाद के संबंध में, या उसके परिणामस्वरूप, या जिसकी बर्खास्तगी से बर्खास्त, सेवामुक्त या हटा दिया गया हो, सेवामुक्ति या छंटनी के कारण वह विवाद उत्पन्न हुआ है, लेकिन इसमें ऐसा कोई भी व्यक्ति शामिल नहीं है-

(i) जो वायु सेना अधिनियम, 1950 (1950 का 45), या सेना अधिनियम, 1950 (1950 का 46), या नौसेना अधिनियम, 1957 (1957 का 62) के अधीन है;

(ii) जो पुलिस सेवा में या जेल के अधिकारी या अन्य कर्मचारी के रूप में कार्यरत है;

(iii) जो मुख्य रूप से प्रबंधकीय या प्रशासनिक क्षमता में कार्यरत है;

(iv) जो पर्यवेक्षी क्षमता में नियोजित होने पर, प्रति माह एक हजार छह सौ रुपये से अधिक वेतन प्राप्त करता है या कार्यालय से जुड़े कर्तव्यों की प्रकृति के कारण या उसमें निहित शक्तियों के कारण, मुख्य रूप से प्रबंधकीय प्रकृति के कार्य करता है।"

धारा 2(ओओ) छंटनी की अवधारणा को इस प्रकार बताती है:

2(00)। छँटनी का अर्थ नियोक्ता द्वारा किसी कर्मचारी की सेवा को किसी भी कारण से समाप्त करना है, सिवाय अनुशासनात्मक कार्रवाई के दंड के रूप में, लेकिन इसमें शामिल नहीं है-

(ए) कर्मचारी की स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति;

(बी) कर्मचारी की सेवानिवृत्ति की आयु तक पहुंचने पर सेवानिवृत्ति, यदि नियोक्ता और संबंधित श्रमिक के बीच रोजगार अनुबंध में इस संबंध में एक शर्त शामिल है;

(बीबी) नियोक्ता और संबंधित श्रमिक के बीच रोजगार के अनुबंध की समाप्ति पर या ऐसे अनुबंध के उसमें निहित एक शर्त के तहत समाप्त होने के परिणामस्वरूप श्रमिक की सेवा की समाप्ति;"

(सी) लगातार खराब स्वास्थ्य के आधार पर किसी कर्मचारी की सेवा समाप्त करना"

आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ एक श्रमिक की छंटनी के लिए पूर्ववर्ती शर्तों का प्रावधान करती है और इसे निम्नानुसार पढ़ा जाता है:

25 एफ. कर्मचारियों की छँटनी से पहले की स्थितियाँ -किसी भी उद्योग में नियोजित कोई भी कर्मचारी जो किसी नियोक्ता के अधीन कम से कम एक वर्ष तक लगातार सेवा में रहा हो, उस नियोक्ता द्वारा तब तक छंटनी नहीं की जाएगी जब तक-

(ए) कर्मचारी को छंटनी के कारणों को दर्शाते हुए लिखित रूप में एक महीने का नोटिस दिया गया है और नोटिस की अवधि समाप्त हो गई है, या कर्मचारी को ऐसे नोटिस के बदले में नोटिस की अवधि के लिए मजदूरी का भुगतान किया गया है:

(बी) कर्मचारी को छंटनी के समय मुआवजा का भुगतान किया गया है, जो निरंतर सेवा के प्रत्येक पूर्ण वर्ष के लिए पंद्रह दिनों के औसत वेतन 2 के बराबर होगा] या छह महीने से अधिक के उसके किसी भी हिस्से के बराबर होगा; और

सी) निर्धारित तरीके से नोटिस उपयुक्त सरकार 3 या ऐसे प्राधिकारी को दिया जाता है जिसे आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा उपयुक्त सरकार द्वारा निर्दिष्ट किया जा सकता है।

आईडी अधिनियम की भावना और योजना पर बैंगलोर जल आपूर्ति और सीवरेज बोर्ड बनाम ए. राजप्पा और अन्य (1978) 2 एससीसी 213 के मामले में इस न्यायालय की सात-न्यायाधीश पीठ द्वारा निम्नलिखित चर्चा की गई थी:

> "संक्षेप में कहें तो, पूरे कानून का व्यक्तित्व, जैसा कि याद किया जाता है, एक कल्याणकारी आधार है, यह एक लाभकारी कानून है जो श्रम की रक्षा करता है, उनकी संतुष्टि को बढ़ावा देता है और संकट और तनाव की स्थितियों को नियंत्रित करता है जहां उत्पादन अस्थिर हमलों और ब्लैकमेल तालाबंदी द्वारा खतरे में पड़ सकता है। अधिनियम का तंत्र श्रमिकों को विनियमित लाभ प्रदान करने और प्रबंधन और श्रमिकों के बीच वास्तविक या संभावित संघर्षों को कानून के सहानुभूतिपूर्ण नियम के अनुसार हल करने के लिए तैयार किया गया है। इसका लक्ष्य स्थितियों में सुधार करना है कार्यकर्ता, शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की व्यावहारिक

भावना से प्रेरित होकर, दोनों के लाभ के लिए -एक तटस्थ स्थिति नहीं बल्कि अहस्तक्षेप पर प्रतिबंध और कमजोर लोगों के कल्याण के लिए चिंता। क़ानून के साथ सहानुभूति न केवल इसकी भावना को समझने के लिए आवश्यक है, लेकिन इसका अर्थ भी।"

(इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया)

इसी संदर्भ में आईडी अधिनियम के तहत किसी कर्मचारी की छंटनी से संबंधित किसी भी विवाद की सराहना की जानी चाहिए।

बिंदु 1 का उत्तर:

17. श्रीमान ए.टी.एम.संपत अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील संपत का तर्क है कि वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता स्कूल का एक स्थायी कर्मचारी है और इस प्रकार, वह आईडी अधिनियम के प्रयोजनों के लिए 'कर्मचारी' नहीं है। उनकी सेवाएँ इसके बजाय, के अंतर्गत कवर की गई हैं डी. एस. ई. अधिनियम की धारा 2 (एच), 8 (2) और 10, और इस प्रकार, उनकी सेवाओं को आई. डी. अधिनियम की धारा 25 एफ के तहत हटाया नहीं जा सकता है। निर्भरता रखी गया है सुश्री ए. सुंदरम्बल बनाम सरकार गोवा, दमन और दीव और अन्य 3(1988)4 एससीसी 42, के मामले में इस न्यायालय का निर्णय पर जिसमें इस न्यायालय ने

कानूनी सिद्धांत निर्धारित किया है कि जबकि शैक्षणिक संस्थान इसके दायरे में आते हैं 'उद्योग' के लिए, एक शिक्षक आई. डी. अधिनियम के उद्देश्य के लिए श्रमिक नहीं है। विद्वान वकील प्रस्तुत करता है कि सादृश्य का उपयोग करते हुए, स्कूल का चालक भी आईडी अधिनियम के उद्देश्य के लिए 'कर्मचारी' नहीं होगा बल्कि परिभाषित 'कर्मचारी' शब्द के दायरे में आएगा डी. एस. ई. अधिनियम की धारा 2 (एच) के तहत।

18. दूसरी ओर, श्री एस. एस. रे, उपस्थित विद्वान वकील प्रतिवादी स्कूल की ओर से-का तर्क है कि अपीलकर्ता आई. डी. अधिनियम के तहत 'कर्मचारी' की परिभाषा के साथ-साथ डी. एस. ई. अधिनियम के तहत कर्मचारी की परिभाषा के तहत पूरी तरह से शामिल है। विद्वान वकील ए. सुंदरम्बल (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर दृढ़ता से भरोसा करते हैं, जिसमें इस न्यायालय ने कहा कि शिक्षक श्रमिक नहीं हैं आई.डी. अधिनियम के उद्देश्य के लिए, हालांकि शैक्षणिक संस्थान आई. डी. अधिनियम की धारा 2 (जे) के संदर्भ में उद्योग हैं।

19. हम अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वकील द्वारा दिए गए तर्क से सहमत होने में असमर्थ हैं। इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों द्वारा इस प्रश्न 'श्रमिक कौन है' का अच्छी तरह से निपटारा किया गया है। एच. आर. आयंतया बनाम सैंडोज (इंडिया) लिमिटेड (1997) 5 एससीसी 737

मामले में इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने निम्नलिखित निर्णय दिया हैः

> ".....इस प्रकार हमारे पास तीन न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय हैं जिन्होंने यह विचार रखा है कि एक व्यक्ति को एक कर्मचारी होने के लिए योग्य होने के लिए वह काम करना चाहिए जो चार श्रेणियों में से किसी एक में आता है, अर्थात् अर्थात, मैनुअल, लिपिक, पर्यवेक्षी या तकनीकी और दो दो-न्यायाधीशों की पीठ के फैसले, जिनमें उक्त तीन निर्णयों में से एक या दूसरे का उल्लेख करते हुए, उक्त कानून को दोहराया गया है। इसके विपरीत, हमारे पास तीन तीन-न्यायाधीशों की पीठ के फैसले हैं, जिनमें मे और बेकर, विमको के निर्णयों का उल्लेख किए बिना ही उक्त कानून को दोहराया गया है और बुन्ना शैल मामलों (सुप्रा) ने दूसरा दृष्टिकोण अपनाया है जो स्पष्ट रूप से नकारात्मक था, अर्थात, यदि कोई व्यक्ति उक्त परिभाषा के चार अपवादों के अंतर्गत नहीं आता है तो वह आईडी अधिनियम के अर्थ के तहत एक कर्मकार है। ये निर्णय भी उन मामलों में पाए गए तथ्यों के आधार पर हैं। इसलिए, उन्हें उन तथ्यों तक ही सीमित रखा जाना चाहिए। <u>इसलिए आज कानून में जो</u>

स्थिति है वह यह है कि आईडी अधिनियम के तहत कामगार बनने वाले व्यक्ति को किसी भी श्रेणी के काम करने के लिए नियोजित किया जाना चाहिए, जैसे कि, मैनुअल, अकुशल, कुशल, तकनीकी, परिचालन, लिपिक या पर्यवेक्षी। यह पर्याप्त नहीं है कि वह परिभाषा के चार अपवादों में से किसी में भी शामिल नहीं है। हम उक्त व्याख्या को दोहराएँ।"

(इस न्यायालय द्वारा जोर दिया)

20. यह मुद्दा कि क्या शैक्षणिक संस्थान एक 'उद्योग' है, और इसके कर्मचारी आईडी अधिनियम के प्रयोजन के लिए 'कर्मचारी' हैं, का उत्तर इस न्यायालय की सात-न्यायाधीशों की पीठ ने बहुत पहले ही दे दिया है वर्ष 1978 बैंगलोर जल आपूर्ति (सुप्रा) के मामले में। यह माना गया कि शैक्षणिक संस्थान आईडी अधिनियम की धारा 2 (जे) के संदर्भ में एक उद्योग है, हालांकि इसके सभी कर्मचारी कामगार नहीं हैं। इसे इस प्रकार आयोजित किया गया:

"इस आधार पर भरोसा किया गया है कि विश्वविद्यालय में अधिकांश कर्मचारी शिक्षण समुदाय हैं। शिक्षक श्रमिक

नहीं हैं और अधिनियम के तहत विवाद नहीं उठा सकते हैं। अधीनस्थ कर्मचारी केवल महत्वहीन संख्या की एक छोटी श्रेणी हैं, इसलिए संस्थान को बाहर रखा जाना चाहिए प्रमुख चरित्र परीक्षण के आधार पर। यह कहना एक बात है कि एक संस्थान एक उद्योग नहीं है। यह कहना पूरी तरह से एक अलग सोच है कि बड़ी संख्या में इसके कर्मचारी 'कर्मचारी' नहीं हैं और इसलिए अधिनियम के लाभों का लाभ नहीं उठा सकते हैं इसलिए संस्थान एक उद्योग नहीं रह जाता है। परीक्षण यह नहीं है कि हकदार कर्मचारियों की प्रमुख संख्या अधिनियम के लाभों का आनंद ले सकती है। सच्चा परीक्षण गतिविधि की प्रमुख प्रकृति है। विश्वविद्यालय या शैक्षणिक संस्थान के मामले में, गतिविधि की प्रकृति, पूर्व परिकल्पना, शिक्षा है जो समुदाय के लिए एक सेवा है। एर्गो, विश्वविद्यालय एक उद्योग है। यदि हम बड़े सम्मान के साथ ऐसा कह सकते हैं, तो कर्मियों की संख्यात्मक ताकत को गतिविधि की प्रकृति के साथ मिलाने में त्रुटि आ गई है।

दूसरे, विश्वविद्यालय प्रशासन की कई अन्य गतिविधियाँ हैं, जो स्पष्ट रूप से औद्योगिक हैं, जो मुख्य सांस्कृतिक उद्यम की सहायक होते हुए भी अलग-अलग हैं। उदाहरण के

लिए, एक विश्वविद्यालय में एक अलग लेकिन महत्वपूर्ण प्रतिष्ठान के रूप में एक बड़ा प्रिंटिंग प्रेस हो सकता है। इसमें इसे चलाने वाले कर्मचारियों की बड़ी सेना के साथ परिवहन बसों का एक बड़ा बेड़ा हो सकता है। इसमें अधिकारियों और लिपिक संवर्गों की जबरदस्त प्रशासनिक ताकत हो सकती है। इसमें विभिन्न राय के कर्मचारी हो सकते हैं। जैसा कि नागपुर निगम ने किया है प्रभावी ढंग से शासित, इन संचालनों को कई या सामूहिक रूप में देखा गया, उद्योग की तरह माना जा सकता है। यह सचमुच अजीब होगा यदि किसी विश्वविद्यालय के पास 50 परिवहन बसें हैं, तो वह ड्राइवरों, कंडक्टरों,सफाईकर्मी और कार्यशाला तकनीशियन को नियुक्त करता है। उन्हें अधिनियम के लाभों से कैसे वंचित किया जा सकता है, खासकर जब उनका काम अकादमिक शिक्षण से अलग किया जा सकता है, सिर्फ इसलिए कि बसें एक ही कॉर्पोरेट व्यक्तित्व के स्वामित्व में हैं? हम, पूरे बचाव के साथ, विश्वविद्यालय के बहु-रूप संचालन के औद्योगिक चरित्र को ख़त्म करने की इस प्रक्रिया में बहुत कम ताकत पाते हैं।"

(इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया)

उपर्युक्त दो निर्णयों के अवलोकन से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि एक स्कूल द्वारा नियोजित एक चालक, एक कुशल व्यक्ति होने के नाते, आई. डी. अधिनियम के उद्देश्य के लिए एक कर्मचारी है। बिन्दु संख्या 1 का उत्तर तदनुसार उत्तरदाताओं पक्ष में दिया जाता है। आई. डी. अधिनियम के प्रावधान वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू होते हैं।

<u>बिन्दु संख्या 2 का उत्तर</u>

21. श्रीमान ए.टी.एम. अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील संपत का तर्क है कि सीएनजी वाहनों की अनुपलब्धता के आधार पर अपीलकर्ता, जो सेवा के बेदाग रिकॉर्ड वाला एक स्थायी कर्मचारी है, की सेवाओं की छंटनी अवैध, मनमाना और अन्यायपूर्ण है। अपीलकर्ता प्रतिवादी-स्कूल में सात साल से अधिक समय से काम कर रहा था और उसे स्कूल के प्रिंसिपल से उसकी सेवाओं के लिए प्रशंसा पत्र भी मिला था। विद्वान वकील का कहना है कि अपीलकर्ता को प्रतिवादी-प्रबंध समिति के तहत 60 स्कूलों में से किसी एक में वैकल्पिक रोजगार दिया जा सकता था। आगे यह भी प्रस्तुत किया गया है कि नुकसान की रक्षा भी प्रतिवादियों के लिए उपलब्ध नहीं है, क्योंकि अपीलकर्ता की छंटनी के बाद, प्रतिवादी-स्कूल ने एक अन्य, कम अनुभवी व्यक्ति को ड्राइवर के रूप में नियुक्त किया है। विद्वान वकील का तर्क है कि यह आईडी अधिनियम की धारा 25 एच का स्पष्ट उल्लंघन है, जो यह प्रावधान करता है कि जब पुन:

रोजगार का अवसर आता है, तो उस रिक्ति को भरने के लिए किसी अन्य व्यक्ति की तुलना में इच्छुक छंटनी किए गए श्रमिकों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

22. विद्वान वकील ने आगे तर्क दिया कि अपीलकर्ता को नौकरी से हटाने से पहले आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ के तहत निर्धारित शर्तों का अनुपालन नहीं किया गया है। यह प्रस्तुत किया गया है कि निर्धारित प्रपत्र में उचित सरकार को नोटिस भेजने की आवश्यकता नहीं है जैसा आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ (सी) के तहत प्रावधान है, अतः नहीं भेजा गया।

23. दूसरी ओर, प्रतिवादी-स्कूल की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री एस.एस. रे का तर्क है कि अपीलकर्ता की छंटनी का कारण दिनांक 07.01.2003 के नोटिस में विस्तार से बताया गया है। प्रतिवादी स्कूल के पास केवल एक कार बची थी, जबकि तीन ड्राइवर थे, क्योंकि दो अन्य कारों को उपयोग के लिए अनुपयुक्त बना दिया गया था। ऐसा होने पर, प्रतिवादी स्कूल को केवल एक ड्राइवर की सेवाओं की आवश्यकता थी और तदनुसार, दो सबसे जूनियर ड्राइवरों को सेवा से हटा दिया गया था, वर्तमान अपीलकर्ता सबसे जूनियर ड्राइवर था। यह प्रस्तुत किया गया है कि आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ के तहत निर्धारित सभी अनिवार्य शर्तों

का अनुपालन किया गया था, जिसमें अपीलकर्ता को छंटनी मुआवजे का भुगतान भी शामिल था।

24. हम वर्तमान मामले में न्यायाधिकरण के साथ-साथ उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए तर्क से सहमत होने में असमर्थ हैं। माना जाता है कि, दिल्ली राज्य सरकार को आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ (सी) के तहत नोटिस नहीं दिया गया है। राज्य सरकार को नोटिस न भेजने के औचित्य के समर्थन में बॉम्बे जर्नलिस्ट्स (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर निर्भरता रखी गई है। यह निर्णय वर्ष 1963 में दिया गया था और उक्त मामले में यह माना गया था कि आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ (सी) के प्रावधान निर्देशिका हैं और प्रकृति में अनिवार्य नहीं हैं। न्यायाधिकरण के साथ-साथ उच्च न्यायालय द्वारा जिस बात को नजरअंदाज किया गया वह यह है कि बाद में, संसद ने औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम, 1964 अधिनियमित किया। आईडी अधिनियम की धारा 25F (सी) में इन शब्दों को शामिल करने के लिए संशोधन किया गया था:

> "या ऐसा प्राधिकारी जो आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा उपयुक्त सरकार द्वारा निर्दिष्ट किया जा सकता है"

उद्देश्यों और कारणों का विवरण प्रदान करता हैः

"कुछ अन्य आवश्यक संशोधनों का प्रस्ताव करने के अवसर का लाभ उठाया गया है जो मुख्य रूप से औपचारिक या स्पष्टीकरणात्मक प्रकृति के हैं।

25. विधायिका की ओर से यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं किया गया कि उसका उद्देश्य आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ(सी) को एक निर्देशिका प्रावधान बनाना है, जबकि उसी धारा की अन्य दो उप-धाराएं प्रकृति में अनिवार्य हैं। संशोधन निर्दिष्ट किसी अन्य प्राधिकारी को नोटिस देना प्रशासनिक रूप से आसान बनाने के लिए अधिनियामित किया गया था।

26. इसके अलावा, बॉम्बे जर्नलिस्ट्स (सुप्रा) के मामले में भी निर्णय उत्तरदाताओं के बचाव में नहीं आता है। आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ(सी) की व्याख्या के मुद्दे पर इस प्रकार कहा गया:

> "छंटनी से होने वाली कठिनाई को इन दो खंडों द्वारा आंशिक रूप से संबोधित किया गया है, और इसलिए, उन्हें पूर्ववर्ती शर्तें बनाने का हर औचित्य है। खंड (सी) की आवश्यकता के बारे में ऐसा नहीं कहा जा सकता है। खंड (सी) का इरादा कामगारों के हितों की रक्षा करना नहीं है।

इसका उद्देश्य केवल उपयुक्त सरकार को छंटनी के बारे में सूचना देना है, और इससे सरकार को अपने क्षेत्र के विभिन्न उद्योगों में रोजगार की स्थितियों के बारे में सूचित रहने में मदद मिलती है। ऐसा कोई बाध्यकारी विचार मौजूद नहीं दिखता है जो खंड (सी) द्वारा निर्धारित प्रावधान को खंड (ए) और (बी) के समान मामले में पूर्ववर्ती स्थिति बनाने का औचित्य साबित करेगा। इसलिए, उस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए जिसको खंड (ए) और (बी) द्वारा प्राप्त किया जा सकता है क्योंकि खंड (सी) को ध्यान में रखने वाले उद्देश्य से अलग है, यह मानना अनुचित नहीं होगा कि खंड (ए) और (बी) के विपरीत, खंड (सी) एक पूर्ववर्ती शर्त नहीं है।"

(इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया)

इस प्रकार, यह न्यायालय आई. डी. अधिनियम और उसके तहत प्रासंगिक नियमों को एक साथ पढ़ता है और इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि धारा 25एफ (सी) छंटनी के लिए पूर्ववर्ती शर्त नहीं है। कल्पना के किसी भी विस्तार से यह निर्णय नहीं कहा जा सकता है कि उद्योगों को इस शर्त का पालन करने की कोई आवश्यकता नहीं है। अधिक से अधिक, यह

माना जा सकता है कि धारा 25 एफ (सी) एक बाद की शर्त है, लेकिन फिर भी एक अनिवार्य शर्त है जिसे कामगार की छंटनी का आदेश पारित होने से पहले नियोक्ताओं द्वारा पूरा किया जाना आवश्यक है। मैकिनॉन मैकेंज़ी एंड कंपनी लिमिटेड बनाम मैकिनॉन कर्मचारी संघ (2015) 4 एससीसी 544 के मामले में इस न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णय दिया:

इसके अलावा, धारा 25 एफ खण्ड (सी) के प्रावधान के संबंध में, अपीलकर्ता-कंपनी इस बात का ठोस सबूत पेश करने में सक्षम नहीं है कि संबंधित कर्मचारी की छंटनी से पहले राज्य सरकार को निर्धारित तरीके से नोटिस दिया गया था। इसलिए, हमें यह मानना होगा कि अपीलकर्ता-कंपनी ने आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ खंड (ए) और (सी) के अनुसार छंटनी से पहले की शर्तों का पालन नहीं किया है, जो कानून में अनिवार्य हैं।"

तत्काल मामले में, प्रासंगिक नियम औद्योगिक विवाद (केंद्रीय) नियम, 1957 हैं। उक्त नियमों का नियम 76 इस प्रकार हैः

"76. छँटनी की सूचना– यदि कोई नियोक्ता अपने औद्योगिक प्रतिष्ठान में नियोजित किसी ऐसे कर्मचारी की छंटनी करना चाहता है जो उसके अधीन कम से कम एक वर्ष से लगातार सेवा में है (इसके बाद इस नियम और नियम 77 में 'कर्मचारी' के रूप में संदर्भित किया गया है) 78), वह फॉर्म पी में ऐसी छंटनी की सूचना केंद्र सरकार, क्षेत्रीय श्रम आयुक्त

(केंद्रीय) और सहायक श्रम आयुक्त (केंद्रीय) और संबंधित रोजगार कार्यालय को देगा और ऐसा नोटिस उस सरकार, क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (केंद्रीय), सहायक श्रम आयुक्त (केंद्रीय), और संबंधित रोजगार कार्यालय को पंजीकृत डाक से निम्नलिखित तरीके से भेजें:-

(ए) जहां कर्मचारी को नोटिस दिया जाता है, <u>वहां छंटनी का नोटिस कर्मचारी को नोटिस दिए जाने की तारीख से तीन दिनों के भीतर भेजा जाएगा;</u>

(इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया)

नियम 76 (ए) स्पष्ट रूप से कहता है कि जिस तारीख को कर्मचारी को नोटिस दिया जाता है, उस तारीख से तीन दिनों के भीतर नोटिस उपयुक्त अधिकारियों को भेजा जाना चाहिए। वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता को 07.01.2003 को छंटनी का नोटिस दिया गया था। उत्तरदाताओं की ओर से आज तक कोई सबूत पेश नहीं किया गया है जिससे पता चले कि छंटनी का नोटिस उचित प्राधिकारी को भेजा गया है।

27. इस मामले में, यह स्पष्ट है कि वर्तमान मामले में, किसी कर्मचारी की छंटनी के लिए आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ की अनिवार्य शर्तों का अनुपालन नहीं किया गया है। छँटनी का नोटिस दिनांक 07.01.2003 और छँटनी का आदेश दिनांक 25.07.2003 रद्द किये जाने योग्य हैं और तदनुसार रद्द किये जाए।

बिंदु क्रमांक 3 का उत्तर

28. अपीलकर्ता के विद्वान वकील का तर्क है कि प्रतिवादी-स्कूल एक मान्यता प्राप्त निजी स्कूल है और अपीलकर्ता डीएसई अधिनियम की धारा 2 (एच) के संदर्भ में एक 'कर्मचारी' है। डीएसई अधिनियम का अध्याय IV किसी मान्यता प्राप्त निजी स्कूल के कर्मचारी की सेवाओं के नियमों और शर्तों का प्रावधान करता है। डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) में कहा गया है कि किसी मान्यता प्राप्त निजी स्कूल के किसी भी कर्मचारी को शिक्षा निदेशक, दिल्ली की पूर्व मंजूरी के बिना बर्खास्त नहीं किया जाएगा, हटाया नहीं जाएगा या रैंक में कमी नहीं की जाएगी और न ही उनकी सेवाएं समाप्त की जाएंगी। वर्तमान मामले में, प्रतिवादी-प्रबंध समिति, अपीलकर्ता की सेवाओं को समाप्त करने से पहले डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) के उक्त अनिवार्य प्रावधान का अनुपालन नहीं किया है। अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने आगे तर्क दिया कि सेवा समाप्ति के संबंध में अपीलकर्ता को 07.01.2003 को नोटिस दिया गया था, और उस तिथि तक, उपरोक्त वैधानिक प्रावधान वैध और बाध्यकारी था।

29. अपीलकर्ता के विद्वान वकील का कहना है कि डीएसई अधिनियम की धारा बी 8(2) एक कर्मचारी की सेवाओं की शर्तों की सुरक्षा के लिए प्रदान किया गया एक मूल अधिकार है। निदेशक की पूर्व अनुमति प्राप्त किए बिना अपीलकर्ता की सेवाओं की समाप्ति, प्रतिवादी-स्कूल की

कार्रवाई को शून्य बना देती है। विद्वान वकील का तर्क है कि जब वैधानिक प्रावधान किसी कार्य को एक विशेष तरीके से करने की प्रक्रिया प्रदान करते हैं, तो इसे उसी तरीके से किया जाना चाहिए या बिल्कुल नहीं किया जाना चाहिए। बाबू वर्गीस और अन्य बनाम बार काउंसिल ऑफ केरल एवं अन्य (1999) 3 एससीसी 422 के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा रखा गया है।

"31. यह लंबे समय से स्थापित कानून का मूल सिद्धांत है कि यदि किसी विशेष कार्य को करने का तरीका किसी क़ानून के तहत निर्धारित है, तो कार्य उसी तरीके से किया जाना चाहिए या बिल्कुल नहीं किया जाना चाहिए। इस नियम की उत्पत्ति का पता टेलर बनाम टेलर में निर्णय से लगाया जा सकता है जिसके बाद नज़ीर अहमद बनाम किंग एम्परर में लॉर्ड रोश ने निम्नानुसार कहा:

> "जहां एक निश्चित कार्य को एक निश्चित तरीके से करने की शक्ति दी जाती है, वहां उस कार्य को उसी तरीके से किया जाना चाहिए या बिल्कुल नहीं किया जाना चाहिए।"

32. इस नियम को राव शिव बहादुर सिंह और अन्य बनाम विंध्य प्रदेश राज्य में इस न्यायालय द्वाराअनुमोदित किया गया है। और फिर दीप चंद बनाम राजस्थान राज्य में इस न्यायालय द्वारा अनुमोदित किया गया है। इन मामलों पर उत्तर प्रदेश राज्य बनाम सिंघारा सिंह और अन्य में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ द्वारा विचार किया गया था और नज़ीर अहमद के मामले (सुप्रा) में निर्धारित नियम को फिर से बरकरार रखा गया। इस नियम को तब से अदालतों द्वारा क्षेत्राधिकार के प्रयोग पर लागू किया गया है और इसे प्रशासनिक कानून के एक हितकारी सिद्धांत के रूप में भी मान्यता दी गई है।"

(इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया)

30. दूसरी ओर, प्रतिवादी-स्कूल की ओर से उपस्थित विद्वान वकील का तर्क है कि डीएसई एसी की धारा 8(2) का अनुपालन करने के लिए प्रतिवादी-प्रबंध समिति की ओर से कोई आवश्यकता नहीं थी। दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय कथूरिया पब्लिक स्कूल बनाम निदेशक शिक्षा और अन्य 113(2004) डीएलटी 703 (डीबी) के मामले में जिसमें डीएसई की धारा 8(2) को रद्द कर दिया गया था। इसे इस प्रकार ठहराया गया:

"21. यदि टीएमए पाई फाउंडेशन बनाम कर्नाटक राज्य (2002) 8 एससीसी 481 (सुप्रा) मामले में सर्वोच्च

न्यायालय की उपरोक्त टिप्पणियों को उसके तार्किक निष्कर्ष पर ले जाया जाता है, तो इसका अर्थ यह होगा कि कर्मचारियों के अनुशासन के मामले में पूर्व अनुमति या बाद की मंजूरी की ऐसी कोई आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। इस प्रकार चाहे वह निलंबन या अनुशासनात्मक कार्रवाई के लिए हो, शैक्षणिक संस्थानों को खुली छूट होगी। मामलों की जांच के लिए एक न्यायिक न्यायाधिकरण की स्थापना की सुरक्षा प्रदान की गई है।"

इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने टी.एम.ए. पी.ए.आई. बनाम कर्नाटक राज्य **(2002) 8 एस सी सी 481** के मामले में निम्नानुसार व्यवस्था दी थी:

"61...गैर सहायता प्राप्त निजी स्कूलों के मामले में, प्रशासन के संबंध में अधिकतम स्वायत्तता प्रबंधन के पास होनी चाहिए, जिसमें नियुक्ति का अधिकार, अनुशासनात्मक शक्तियां, छात्रों का प्रवेश और ली जाने वाली फीस शामिल है।

"64. एक शैक्षणिक संस्थान की स्थापना केवल छात्रों को शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से की जाती है। ऐसी संस्था में अनुशासन बनाए रखना और कानूनी रूप से बनाए गए नियमों और विनियमों का पालन करना सभी के लिए आवश्यक है। शिक्षक पालक माता-पिता की तरह होते हैं जिनके द्वारा शिक्षा प्राप्त करने के लिए छात्रों की देखभाल, तैयारी और मार्गदर्शन करना आवश्यक है। शिक्षक और संस्थान छात्रों के लिए मौजूद हैं, न कि इसके विपरीत। एक बार इस सिद्धांत को ध्यान में रखने के बाद, इसका पालन करना अनिवार्य हो जाता है एक शैक्षणिक संस्थान के शिक्षण और अन्य कर्मचारी अपने कर्तव्यों को ठीक से और छात्रों के लाभ के लिए निभाएं। जहां कदाचार के आरोप लगाए जाते हैं, यह जरूरी है कि अनुशासनात्मक जांच की जाए और निर्णय लिया जाए। एक निजी संस्थान के मामले में, प्रबंधन और कर्मचारियों के बीच संबंध प्रकृति में संविदात्मक होता है। एक शिक्षक, यदि अनुबंध में ऐसा प्रावधान है, के खिलाफ कार्रवाई की जा सकती है, और यदि शिक्षक का कदाचार साबित होता है तो उचित अनुशासनात्मक कार्रवाई की जा सकती है। कर्तव्यों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए और कदाचार स्थापित करने

और उस पर कार्रवाई करने के उद्देश्य से प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए, यह जरूरी है कि एक निष्पक्ष घरेलू जांच की जाए। अनुशासनात्मक जांच के नतीजे के आधार पर ही प्रबंधन उचित कार्रवाई करने का निर्देश देने का अधिकार होगा। हमें कोई कारण नहीं दिखता कि किसी निजी गैर-सहायता प्राप्त शिक्षण संस्थान के प्रबंधन को ऐसी कोई भी कार्रवाई करने से पहले किसी सरकारी प्राधिकारी की सहमति या अनुमोदन क्यों लेना चाहिए। रोज़गार अनुबंध की शर्तों द्वारा शासित मालिक और नौकर के सामान्य रिश्ते में, जो कोई भी शर्तों के उल्लंघन का दोषी है, उसके खिलाफ कार्रवाई की जा सकती है और उचित राहत मांगी जा सकती है। आम तौर पर, पीड़ित पक्ष अदालत का दरवाजा खटखटाएगा और निवारण की मांग करेगा। हालाँकि, शैक्षणिक संस्थानों के मामले में, हमारी राय है कि किसी शिक्षक या स्टाफ के सदस्य को समस्या निवारण के उद्देश्य से दीवानी न्यायालय में जाने की आवश्यकता सामान्य शिक्षा के हित में नहीं है। शैक्षणिक संस्थानों के प्रबंधन और कर्मचारियों के बीच विवादों का निपटारा शीघ्रता से और अत्याधिक लागत के बिना किया जाना चाहिए। इसलिए, यह उचित होगा कि राज्य के प्रत्येक

जिले में एक शैक्षिक न्यायाधिकरण स्थापित किया जाए, जिसका उद्देश्य यह हो कि शिक्षक को न्यायाधिकरण के स्थान के कारण उत्पन्न होने वाली पर्याप्त लागतों से पीड़ित न होना पड़े; यदि न्यायाधिकरणों की संख्या सीमित है, तो वे इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए विभिन्न जिलों में सर्किट/शिविर बैठकें आयोजित कर सकते हैं। जब तक एक विशेष न्यायाधिकरण स्थापित नहीं हो जाता, तब तक अपील दायर करने का अधिकार सरकार द्वारा अधिसूचित जिला न्यायाधीश या अतिरिक्त जिला न्यायाधीश के समक्ष रहेगा। <u>किसी शिक्षक या किसी अन्य कर्मचारी के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई करते समय संस्थान को किसी सरकारी प्राधिकारी की पूर्व अनुमति या कार्योत्तर अनुमोदन प्राप्त करना आवश्यक नहीं होगा</u>। राज्य सरकार, उच्च न्यायालय के परामर्श से, न्यायिक मंच का निर्धारण करेगी जिसमें एक पीड़ित शिक्षक अनुशासनात्मक कार्रवाई या सेवा समाप्ति से संबंधित प्रबंधन के फैसले के खिलाफ अपील दायर कर सकता है।

(इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया)

प्रतिवादी-स्कूल की ओर से उपस्थित विद्वान वकील का कहना है कि अपीलकर्ता की सेवाओं की समाप्ति के लिए पूर्व अनुमोदन प्राप्त नहीं करना उचित है।

31. हम प्रतिवादी-स्कूल की ओर से उपस्थित विद्वान वकील द्वारा दिए गए तर्क से सहमत होने में असमर्थ हैं। डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) एक कर्मचारी के पक्ष में एक प्रक्रियात्मक सुरक्षा है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि शिक्षा निदेशक की पूर्व मंजूरी के बिना समाप्ति या बर्खास्तगी का आदेश पारित नहीं किया जाता है। यह मान्यता प्राप्त निजी स्कूल के किसी कर्मचारी की मनमानी बर्खास्तगी या अनुचित समाप्ति से बचने के लिए है।

32. राज्य विधानमंडल को भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची II की प्रविष्टि XI से शैक्षणिक संस्थानों के संबंध में ऐसे वैधानिक प्रावधान लागू करने का अधिकार है, जो इस प्रकार है:

"विश्वविद्यालयों सहित शिक्षा"

"देश भर में कई कानून बनाए गए हैं जो शैक्षणिक संस्थानों के विनियमन से संबंधित हैं, जिनमें डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) के तहत दिए गए प्रावधानों के समान प्रावधान शामिल हैं। ऐसा ही एक प्रावधान कटरा एजुकेशनल सोसाइटी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य एआईआर 1966 एससी 1307 के मामले में इस न्यायालय की संविधान

पीठ के समक्ष विचार के लिए आया था। उसमें लगाए गए विवादित प्रावधान संशोधित इंटरमीडिएट शिक्षा अधिनियम (यू.पी. अधिनियम 2, 1921) की कुछ धाराएँ थीं। इंटरमीडिएट शिक्षा (संशोधन) अधिनियम, 1958 की धारा 16-जी में प्रावधान है कि प्रबंधन समिति इंस्पेक्टर की लिखित पूर्वानुमति के बिना किसी कॉलेज या स्कूल के प्रिंसिपल, हेडमास्टर या शिक्षक को सेवा से हटा या बर्खास्त नहीं कर सकती है। संशोधन अधिनियम में शैक्षणिक संस्थानों के कुछ अन्य पहलुओं पर सरकारी नियंत्रण प्रदान करने वाले अन्य प्रावधान भी शामिल थे। संशोधन अधिनियम को लागू करने के लिए राज्य विधायिका की क्षमता पर निर्णय करते हुए, इस न्यायालय ने निम्नानुसार कहा:

> "8. 7वीं अनुसूची की सूची II की प्रविष्टि 11 में "विश्वविद्यालयों सहित शिक्षा" शीर्ष के तहत कानून बनाने की राज्य विधानमंडल की शक्ति में <u>प्रथम दृष्टया शिक्षा से संबंधित मामलों में शैक्षणिक संस्थानों के प्रबंधन पर प्रतिबंध लगाने की शक्ति शामिल होगी</u>। विवादित विधान का सार और तत्व राज्य विधानमंडल की क्षमता के भीतर शिक्षा के क्षेत्र के संबंध में है, शैक्षणिक संस्थानों पर नियंत्रण बनाए रखने के संबंध में कानून बनाने का अधिकार प्रदान करता है उच्च माध्यमिक शिक्षा और उस उद्देश्य के

लिए शैक्षणिक संस्थानों के उचित प्रशासन के लिए प्रावधान करने से इनकार नहीं किया गया था। लेकिन यह कहा गया कि विवादित अधिनियम इस हद तक निष्क्रिय है कि यह समितियों के तहत पंजीकृत शैक्षणिक संस्थान के प्रबंधन पर नियंत्रण लागू करना चाहता है पंजीकरण अधिनियम और न्यासियों के माध्यम से प्रबंधित किया जाता है, और इस तरह सूची । की प्रविष्टि 44 और सूची III की प्रविष्टि 10 और 18 द्वारा प्रदत्त विधायी शक्ति पर सीधे प्रभाव पड़ता है। इस तर्क तत्वहीन है। इस न्यायालय ने न्यासी बोर्ड बनाम दिल्ली राज्य मामले में कहा है कि जो कानून सोसायटी पंजीकरण अधिनियम के तहत पंजीकृत सोसायटी के प्रबंधन बोर्ड को प्रबंधन की शक्ति से वंचित करता है और एक नया बोर्ड बनाता है, वह सूची । की प्रविष्टि 44 के अंतर्गत नहीं आता है। लेकिन सूची II की प्रविष्टि 32 के अंतर्गत आता है, क्योंकि सोसायटी पंजीकरण अधिनियम के तहत पंजीकरण से सोसायटी कॉर्पोरेट स्थिति प्राप्त नहीं करती है। यह भी नहीं कहा जा सकता कि अधिनियम का सार और तत्व दान या धर्मार्थ संस्थानों, या ट्रस्टों या ट्रस्टियों से संबंधित है। यदि अधिनियम की वास्तविक प्रकृति और चरित्र सूची II की प्रविष्टि 11 द्वारा प्रदत्त स्पष्ट विधायी शक्ति के अंतर्गत

आता है, केवल इसलिए कि यह संयोगवश किसी धर्मार्थ संस्था, या संस्था के ट्रस्टियों की शक्तियों को नुकसान पहुँचाता है या प्रभावित करता है, तो यह उस कारण से नहीं होगा राज्य के विधायी अधिकार से परे हो। किसी धर्मार्थ संस्थान के ट्रस्टियों या प्रबंधन के अधिकारों पर अधिनियम का प्रभाव पूरी तरह से आकस्मिक है, कानून का वास्तविक उद्देश्य शैक्षणिक संस्थानों पर नियंत्रण प्रदान करना है। इसलिए संशोधित अधिनियम राज्य विधानमंडल की क्षमता के भीतर था और तथ्य यह है कि यह संयोगवश शैक्षिक संस्थानों के संबंध में ट्रस्टियों या प्रबंधन की शक्तियों को प्रभावित करता है, जिन्हें धर्मार्थ माना जा सकता है, उस शक्ति के अभ्यास की वैधता से ध्यान नहीं भटकाया जा सकता है।

10... यदि प्रबंधन निदेशक द्वारा दिए गए निर्देशों का पालन करने में विफल रहता है, तो वह अधिकारी प्रबंधन द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण या प्रतिनिधित्व, यदि कोई हो, पर विचार करने के बाद, मान्यता वापस लेने या सिफारिश करने के लिए मामले को बोर्ड को भेज सकता है। उप-धारा (4) के तहत संस्था के खिलाफ कार्रवाई करने के लिए

राज्य सरकार को और जिन शक्तियों का प्रयोग राज्य सरकार इस बात से संतुष्ट होने के बाद कर सकती है कि संस्था के मामलों का कुप्रबंधन हो रहा है या कि प्रबंधन जानबूझकर या लगातार अपने कर्तव्यों के पालन में विफल रहा है, उनमें प्रबंधन के लिए एक अधिकृत नियंत्रक नियुक्त करने की शक्ति शामिल है संस्था के मामले संभालने हेतु ऐसी अवधि के लिए जो सरकार द्वारा निर्दिष्ट की जा सकती है। यह प्रावधान अनुशासनात्मक है और छात्रों के सर्वोत्तम हितों को सुरक्षित करने के लिए अधिनियमित किया गया है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में राज्य अपने नागरिकों की आने वाली पीढ़ी के लिए शिक्षा प्रदान करने की एक स्वस्थ प्रणाली सुनिश्चित करने में अत्यंत रुचि रखता है, और यदि प्रबंधन अवज्ञाकारी है और छात्रों के हितों में अधिनियमित प्रावधानों को लागू करने के लिए सुविधाएं सुविधाओं का खर्च उठाने से इंकार करता है, राज्य सरकार को अपने अधिकृत नियंत्रक के माध्यम से प्रबंधन में प्रवेश करने के लिए अधिकृत करने वाले प्रावधान को अनुचित नहीं माना जा सकता है।"

(इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया)

संविधान पीठ के उपरोक्त फैसले के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि राज्य विधायिका को डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) के प्रावधान के समान कानून बनाने का अधिकार है।

33. इस स्तर पर, डीएसई अधिनियम, 1973 के उद्देश्यों और कारणों के विवरण को संदर्भित करना भी उपयोगी होगा। इसे निम्नानुसार पढ़ा जाता है:

> "हाल के वर्षों में केंद्र शासित प्रदेश दिल्ली में निजी तौर पर प्रबंधित शैक्षणिक संस्थानों के असंतोषजनक कामकाज और प्रबंधन को काफी प्रतिकूल आलोचना का सामना करना पड़ा है। किसी भी कानूनी शक्ति के अभाव में, सरकार के लिए उनमें सुधार करना संभव नहीं है। इसलिए, केंद्र शासित प्रदेश दिल्ली में शैक्षणिक संस्थानों के बेहतर संगठन और विकास, शिक्षकों की सेवा की सुरक्षा सुनिश्चित करने, उनके रोजगार के नियमों और शर्तों को विनियमित करने के लिए प्रभावी विधायी उपाय करने की तत्काल आवश्यकता महसूस की जा रही है..... विधेयक इन उद्देश्यों को प्राप्त करना चाहता है।"...

डीएसई अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के विवरण को पढ़ने से स्पष्ट रूप से पता चलेगा कि इसे लागू करते समय विधायिका का इरादा स्कूल के कर्मचारियों को कार्यकाल की सुरक्षा प्रदान करना और उनके रोजगार के नियमों और शर्तों को विनियमित करना था।

प्रिंसिपल और अन्य बनाम पीठासीन अधिकारी और अन्य (1978) 1 एससीसी 498 मामले में इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने निम्नानुसार निर्णय लिया:

> "अधिनियम की धारा 8 की उप-धारा (2) में प्रावधान है कि इस संबंध में बनाए गए किसी भी नियम के अधीन, किसी मान्यता प्राप्त निजी स्कूल के किसी भी कर्मचारी को बर्खास्त नहीं किया जाएगा, हटाया नहीं जाएगा या रैंक में कमी नहीं की जाएगी और न ही उसकी सेवा अन्यथा समाप्त की जाएगी शिक्षा निदेशक की पूर्व मंजूरी को छोड़कर। इससे यह स्पष्ट है कि शिक्षा निदेशक की पूर्व मंजूरी केवल तभी आवश्यक है जब किसी मान्यता प्राप्त निजी स्कूल के कर्मचारी की सेवा समाप्त की जानी हो।"

34. इस प्रकार, दिल्ली उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने कथूरिया के मामले में डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) को रद्द करने में गलती की पब्लिक स्कूल (सुप्रा) टीएमए पाई (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा करते हुए, क्योंकि विवाद का विषय स्कूल के कर्मचारियों के कार्यकाल की सुरक्षा नहीं था, बल्कि सवाल यह था कि शैक्षणिक संस्थानों को निर्बाध रूप से कार्य करने का अधिकार। जबकि सहायता प्राप्त और गैर-सहायता प्राप्त शैक्षणिक संस्थानों का कामकाज अनावश्यक सरकारी हस्तक्षेप से मुक्त होना चाहिए, वहीं इन संस्थानों के कर्मचारियों के रोजगार की शर्तों और उनके हितों की रक्षा के लिए पर्याप्त सावधानियों के प्रावधान के साथ सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यकता है। डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) एक ऐसी एहतियाती सुरक्षा है जिसका पालन यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाना चाहिए कि शैक्षणिक संस्थानों के कर्मचारियों को प्रबंधन के हाथों अनुचित व्यवहार का सामना न करना पड़े। दिल्ली उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने कथूरिया पब्लिक स्कूल (सुप्रा) के मामले में डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) को रद्द करते हुए कटरा एजुकेशनल सोसाइटी (सुप्रा) के मामले में निर्धारित कानून को सही ढंग से लागू नहीं किया है। जिसमें इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) के समान प्रावधान के संदर्भ में और सहायता प्राप्त या गैर सहायता प्राप्त मान्यता प्राप्त स्कूल के विनियमन के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए माना है कि सेवा शर्तों का विनियमन निजी मान्यता

प्राप्त स्कूलों के कर्मचारियों को शैक्षिक अधिकारियों द्वारा नियंत्रित किया जाना आवश्यक है और राज्य विधायिका को डीएसई अधिनियम में इस तरह के प्रावधान को कानून बनाने का अधिकार है। डिवीजन बेंच ने कटरा एजुकेशन सोसाइटी (सुप्रा) के मामले में फैसले के उस हिस्से पर गलत भरोसा किया, जो संविधान के अनुच्छेद 14 और सहायता प्राप्त और गैर-सहायता प्राप्त शैक्षणिक संस्थानों से संबंधित था, जिसका वहां की तथ्यात्मक स्थिति पर कोई असर नहीं था। इसके अलावा, फ्रैंक एंथोनी पब्लिक स्कूल एम्प्लॉइज एसोसिएशन बनाम यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य (1986) 4 एससीसी 707 के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर निर्भरता भी गलत है क्योंकि उस मामले में विचाराधीन संस्था एक धार्मिक अल्पसंख्यक संस्था थी। टीएमए पीएआई (सुप्रा) के मामले में उत्तरदाताओं की ओर से पेश होने वाले विद्वान वकील द्वारा भी गलत बताया गया है क्योंकि ऊपर चर्चा किए गए कारणों से इसका तत्काल मामले के तथ्यों पर कोई असर नहीं पड़ता है। दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा कथूरिया पब्लिक स्कूल (सुप्रा) के मामले के निर्णय पर निर्भरता रखना गलत है क्योंकि कटरा एजुकेशन सोसाइटी (सुप्रा) के मामले में संविधान पीठ के फैसले के वास्तविक उद्देश्य की सराहना किए बिना इसे पारित किया गया है। इसलिए, कथूरिया पब्लिक स्कूल (सुप्रा), मामले में डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) को रद्द करने का निर्णय कानून में गलत है।

35. इसके अलावा, कथूरिया पब्लिक स्कूल (सुप्रा) के मामले में निर्णय एक और कारण से उत्तरदाताओं की सहायता के लिए नहीं आया। निर्विवाद रूप से, अपीलकर्ता को 07.01.2003 को छंटनी का नोटिस दिया गया था और उसे 25.07.2003 को सेवा से हटा दिया गया था। कथूरिया पब्लिक स्कूल (सुप्रा) के मामले में डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) को रद्द करने का निर्णय लगभग ठीक दो साल बाद, यानी 22.07.2005 को दिया गया था। निश्चित रूप से, उत्तरदाताओं ने यह अनुमान नहीं लगाया होगा कि अपीलकर्ता के खिलाफ पारित बर्खास्तगी के आदेश के लिए निदेशक से पूर्व अनुमोदन की आवश्यकता को बाद में रद्द कर दिया जाएगा और इसलिए उन्होंने इसका अनुपालन नहीं करने का फैसला किया। डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) अपीलकर्ता की छंटनी की तारीख के अनुसार क़ानून का एक वैध प्रावधान था, और इसका कोई कारण नहीं है कि इसका अनुपालन नहीं किया जाना चाहिए था। मुकदमे के पक्षकारों के अधिकारों और दायित्वों पर मुकदमा शुरू होने की तारीख पर कानून के अनुसार विचार किया जाना चाहिए। यह कानून का काफी सुस्थापित सिद्धांत है। दयावती बनाम इंद्रजीत एआईआर 1966 एससी 1423 के मामले में, इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने निम्नानुसार निर्णय दिया:

> "अब एक सामान्य प्रस्ताव के रूप में, यह स्वीकार किया जा सकता है कि आम तौर पर अपील की अदालत

किसी नए कानून पर विचार नहीं कर सकती है, जिसे अपील किए गए फैसले के बाद अस्तित्व में लाया गया है, क्योंकि अपील में वादियों के अधिकार इसके तहत निर्धारित होते हैं मुक़दमे की तारीख़ पर जो क़ानून लागू है।"

अभी हाल ही में, कारोना लिमिटेड बनाम पार्वती स्वामीनाथन एंड संस (2007) 8 एससीसी 559 के मामले में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णय दिया:

"..... मूल नियम यह है कि पक्षकारों के अधिकारों का निर्धारण मुकदमा शुरू होने की तारीख के आधार पर किया जाना चाहिए। इस प्रकार, यदि वादी के पास मुकदमा दायर करने की तारीख पर कार्यवाही का कोई कारण नहीं है, आम तौर पर, उसे मुकदमा दायर करने के बाद उत्पन्न होने वाली कार्यवाही के कारण का लाभ उठाने की अनुमति नहीं दी जाएगी। इसके विपरीत, किसी भी बाद की घटना के कारण वादी को आम तौर पर कोई राहत देने से इनकार नहीं किया जाएगा यदि मुकदमा दायर करने की तारीख पर

मुकदमे में, उसे ऐसी राहत का दावा करने का वास्तविक अधिकार है।"

36. तत्काल मामले में प्रतिवादी-प्रबंध समिति ने अपीलार्थी के विरूद्ध पारित समाप्ति आदेश की पूर्व स्वीकृति प्राप्त नहीं की शिक्षा निदेशक, एससीटी सरकार, दिल्ली से जो डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) के तहत आवश्यक है। इस प्रकार, अपीलकर्ता के विरुद्ध पारित किया गया समाप्ति का आदेश कानून की दृष्टि से गलत है।

<u>बिंदु क्रमांक **4** का उत्तर **-**</u>

37. आईडी अधिनियम की धारा 25 एफ और डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) के अनिवार्य प्रावधानों का अनुपालन न करने के कारण अपीलकर्ता की बर्खास्तगी कानून की दृष्टि से गलत है। इसके अलावा, प्रतिवादी-स्कूल ने यह दिखाने के लिए रिकॉर्ड पर कोई सबूत पेश नहीं किया है कि अपीलकर्ता की छंटनी आवश्यक थी क्योंकि वह 'अधिशेष' हो गया था। अपीलकर्ता की बर्खास्तगी का आदेश वर्ष 2003 में दिया गया था और वह आज तक बेरोजगार है। उत्तरदाता यह दिखाने के लिए कोई सबूत पेश करने में असमर्थ रहे हैं कि वह उस अवधि के दौरान लाभप्रद रूप से कार्यरत थे और इसलिए वह दीपाली गुंडू सुरवासे बनाम क्रांति जूनियर अध्यापक महाविद्यालय **(**डी.ईडी.**)** एवं अन्य (2013) 10 एससीसी 324 के

मामले में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के मद्देनजर बकाया वेतन और अन्य परिणामी लाभों के हकदार हैं जिसमें इसे निम्नानुसार कहा किया गया था:

"22. किसी कर्मचारी को उसी पद पर बहाल करने का विचार, जिस पर वह बर्खास्तगी, निष्कासन या सेवा समाप्ति से पहले था, का तात्पर्य यह है कि कर्मचारी को उसी पद पर रखा जाएगा, जहां वह नियोक्ता द्वारा की गई अवैध कार्रवाई के बिना होता। किसी ऐसे व्यक्ति को लगा आघात जिसे बर्खास्त कर दिया गया है या हटा दिया गया है या अन्यथा सेवा से हटा दिया गया है, को आसानी से पैसे के संदर्भ में नहीं मापा जा सकता है। एक आदेश पारित होने के साथ, जो नियोक्ता-कर्मचारी संबंध को विच्छेद करने का प्रभाव डालता है, बाद वाले की आय का स्रोत सूख जाता है। न केवल संबंधित कर्मचारी, बल्कि उसका पूरा परिवार गंभीर विपत्तियों से पीड़ित होता है। वे जीविका के स्रोत से वंचित हो जाते हैं। बच्चे पौष्टिक भोजन और जीवन में शिक्षा और उन्नति के सभी अवसरों से वंचित हो जाते हैं। कभी-कभी, परिवार को भुखमरी से बचने के लिए रिश्तेदारों और अन्य परिचितों से उधार लेना पड़ता है। ये कष्ट तब तक जारी

रहते हैं जब तक सक्षम न्यायिक मंच नियोक्ता द्वारा की गई कार्रवाई की वैधता पर निर्णय नहीं ले लेता। ऐसे कर्मचारी की बहाली, जो सक्षम न्यायिक/अर्ध न्यायिक निकाय या न्यायालय के इस निष्कर्ष से पहले होती है कि नियोक्ता द्वारा की गई कार्रवाई प्रासंगिक वैधानिक प्रावधानों या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के दायरे से बाहर है, कर्मचारी को पूरा बकाया वेतन का दावा करने का अधिकार देती है। यदि नियोक्ता कर्मचारी को पिछला वेतन देने से इनकार करना चाहता है या परिणामी लाभ प्राप्त करने के उसके अधिकार का विरोध करना चाहता है, तो यह उसका विशेष रूप से अनुरोध करने और साबित करने का काम है कि बीच की अवधि के दौरान कर्मचारी लाभप्रद रूप से नियोजित था और समान परिलब्धियाँ प्राप्त कर रहा था। किसी कर्मचारी को पिछला वेतन देने से इनकार, जो नियोक्ता के गैरकानूनी कृत्य के कारण नुकसान उठाता है अप्रत्यक्ष रूप से संबंधित कर्मचारी को दंडित करने और नियोक्ता को परिलब्धियों सहित बकाया वेतन का भुगतान करने के दायित्व से मुक्त करके पुरस्कृत करने के समान होगा।"

38. ऊपर बताए गए कारणों से, हमारा विचार है कि दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 28.07.2008 के विवादित निर्णय और आदेश को इस अपील की अनुमति देकर रद्द किये जाने योग्य है और तदनुसार रद्द किया जाना चाहिए। अपीलकर्ता को उसकी सेवा से हटाना कानूनन गलत है। प्रतिवादी-प्रबंध समिति को अपीलकर्ता को उसके पद पर बहाल करने का निर्देश दिया जाता है। नतीजतन, इस आदेश की तारीख तक बकाया वेतन की राहत अपीलकर्ता को उसकी सेवाओं की समाप्ति की तारीख से सभी परिणामी लाभों के साथ प्रदान की जाती है। बकाया वेतन की गणना मजदूरी/वेतन के आवधिक संशोधन के आधार पर की जाएगी। हम यह भी स्पष्ट करते हैं कि अपीलकर्ता को देय पूरी राशि छंटनी की अवधि और इस निर्णय की तारीख के बीच की अवधि में वितरित की जानी चाहिए, जो कि 13 वर्ष है, क्योंकि अपीलकर्ता आयकर अधिनियम की धारा 89 के तहत लाभ का हकदार है। इस फैसले की प्रति प्राप्त होने की तारीख से छह सप्ताह के भीतर इसका अनुपालन किया जाना चाहिए।

अपील की अनुमति दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफ़िश्यल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" **की सहायता से अनुवादक अधिवक्ता चित्रा भदौरिया द्वारा किया गया है।**

अस्वीकरण-इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।